'विचार मुक्त' समाज का आईना

आलोक मेहता

नया दौर, नई राजनीति, नई अर्थनीति, नई संचार क्रांति के साथ नया समाज बन रहा है। इसी बदलाव के युग में नए नारे, नए नेता, नए अपराधी, नए प्रचारक सामने आ रहे हैं। भारतीय जनता पार्टी के शीर्ष नेताओं ने आह्वान किया कि अब 'कांग्रेस मुक्त भारत' बनाना है। बेचारी कांग्रेस पार्टी तो 130 बरस की हो गई है। भाजपा में तो 75 वर्ष की आयु के बाद वनवास देने का प्रावधान है। प्राचीन हिंदू धर्मशास्त्रों में 75 के बाद वानप्रस्थ या संन्यास की व्यवस्था बताई गई है। इसलिए इक्कीसवीं सदी की पार्टी को लगता है कि मार्गदर्शकों के विचार घिसे-पिटे होते हैं और उनका मन लगा रहे तो वे तपोवन में सोच-विचार, तपस्या कर अन्य लोकों के साथ नाता जोड़ सकते हैं। भाजपा के अभियान से प्रभावित सत्ता में सहयोगी शिवसेना ने संविधान के मूल सिद्धांतों-विचारों से मुक्त रहकर 'हिंदू राष्ट्र' घोषित करने की मांग कर दी। ठाकरे बंधुओं को मोदी सरकार के कामकाज और विकास कार्यक्रमों के विचार रास नहीं आ रहे हैं। आखिरकार, मुंबई महानगर पालिका पर शिवसेना का आधिपत्य है और मुंबई की गड्ढों और जल भराव वाली सड़कों पर घंटों समय बिताने वालों को अच्छे-बुरे के बारे में विचार का वक्त ही कैसे मिल सकता है? दूसरे सहयोगी अकाली दल के नेताओं के बारे में बंद कमरों में भाजपाई भी मानते हैं कि पंजाब में 'अकाली नशा' राजनीतिक सफलता का सुगम रास्ता है इसलिए पंजाब को सामाजिक-आर्थिक बदलाव की जरूरत ही नहीं है। नशा धर्म का हो या ड्रग्स का, कम से कम भोली-भाली जनता को विचारों से मुक्त कर सपनों की दुनिया में आनंद ला देता है।

बदले माहौल में प्रेरणा प्रतिपक्ष के नेताओं ने भी ले ली। नीतीश कुमार, गुलाम नबी आजाद, लालू प्रसाद यादव, मुलायम सिंह यादव, सीताराम येचुरी, ममता बनर्जी ने कमर कसने के साथ नारा दिया है- 'संघ-भाजपा मुक्त भारत।' स्वाभाविक है, जब 60 वर्षों बाद कांग्रेस-समाजवादी-कम्युनिस्ट विचारधाराओं के आधार पर टकराना छोड़ सकते हैं तो सत्ताधारी संघ-भाजपा के विचारों को क्यों रहने दिया जाए? गांधीवादी कांग्रेस और रामभक्त भाजपा अपनी पार्टियों के लिखित संकल्पों के बावजूद शराबबंदी लागू नहीं करवा सकीं, वहां नीतीश कुमार ने एक झटके से संपूर्ण बिहार में शराबबंदी लागू कर दी। इस दांव का तोड़ अभी कोई पार्टी नहीं ढूंढ़ पा रही है। यूं नीतीश के साथी लालू यादव को किसी विचार वाले व्यक्ति से परहेज नहीं है। वर्षों तक भाजपा नेताओं के कानूनी कवच रहने वाले 92 वर्षीय राम जेठमलानी को ससम्मान समर्थन देकर सांसद बनवा दिया, शाहबुद्दीन भले ही जेल में हों- पुराना स्नेह बरकरार है। जयप्रकाश नारायण के आंदोलन में बोले-बताए भ्रष्ट और अपराधमुक्त राजनीतिक व्यवस्था के विचार भला नई पीढ़ी को कहां याद होंगे? इसलिए जोड़-तोड़ की सत्ता का सुख नेता-कार्यकर्ता के लिए पर्याप्त है। जनता को कोई गलतफहमी हो तो विचारों के चक्कर में उलझी रहे।

विचारों से मुक्ति के अभियान का बड़ा कारण आर्थिक है। अब राजनीतिक दलों और नेताओं को समाजवाद, पूंजीवाद, साम्यवाद के किताबी सिद्धांतों या उनके आधार पर कार्यक्रम बनाना बेमानी लगता है। उन्हें सत्ता में आने के लिए विचारों की अपेक्षा मोटी धनराशि का इंतजाम करना होता है। जब लोकसभा का चुनाव लड़ने के लिए 10 करोड़ रुपये, विधानसभा के लिए 5 करोड़, पार्षद के लिए एक से दो करोड़ और पंचायत के लिए 25 से 50 लाख तक खर्च करने हों तो किसी भी 'वाद' से फायदा नहीं है। हां, चंदा देने वाले को सत्ता में आने के बाद फायदा देने की उम्मीद का शर्बत पिलानी जरूरी है। चुनावों के लिए कागजी घोषणा-पत्र, बैनर-पोस्टर-नारे, रेडियो जिंगल, टी.वी. स्पाट या सभा के भाषण तैयार करने के लिए पीके जैसे प्रबंधकों की कंपनी को ठेका और फंड देना है। वह जमाना लद गया, जब कार्यकर्ता नारे गढ़ते-लगाते थे या विचारधाराओं से जुड़े प्राध्यापक, लेखक-पत्रकार, कलाकार प्रतिबद्धता के कारण मुफ्त में दिन-रात प्रचार सामग्री लिखते, बहस करते जुटे होते थे। ठीक ही तो है, आजकल शुद्ध घी के पकवान कितने लोग पचा पाते हैं। मिक्सिंग के फॉर्मूले हर क्षेत्र में हैं। मिक्सिंग की मशीन तेज चलती है। विचारों की धार भोथरी जा चुकी है।

विचार मुक्ति के लिए राजनीतिक दलों को ही सारा 'श्रेय' देना ठीक नहीं होगा। आखिरकार 60 वर्ष की उम्र तक नेहरू, धर्मनिरपेक्षता, पाकिस्तान सहित मुस्लिम राष्ट्रों के साथ मधुर संबंधों पर धुआंधार पुस्तकें लिखने, भाषण देने वाले अचानक सरकारी झूले में बैठकर विपरीत विचारों का गाना गाने लगेंगे तो कथित विचारों-सिद्धांतों की क्या कोई गुंजाइश रहेगी? जे. पी., लोहिया, हेडगेवार, दीनदयाल उपाध्याय के विचारों की बांसुरी बजाने वाले भी बदले हैं। अब उन्हें गांधी, नेहरू, मार्क्स, अब्राहम लिंकन की स्मृतियों से जुड़े संस्थानों को अपने ढंग से सजाने संवारने में गौरव का अनुभव हो रहा है। वैसे भी उन संस्थानों की पुस्तकें, रिकॉर्ड पुराना हो गया है। इतिहास पुराने हो चुके हैं। जब रामायण के कई रूप निकल सकते हैं- विभिन्न एशियाई देशों में राम कथा के पात्र के रिश्ते तक भिन्न हो सकते हैं तो ब्रिटिश राज या पिछले 70 वर्षों के इतिहास को भी झाड़-पोंछकर नई व्याख्याओं, बदले अध्यायों में तैयार करवाया जा सकता है। नई पीढ़ी को पुस्तकों के बजाय डिजिटल प्रतियां मिलनी हैं। उन्हें जो कुछ नया पढ़ाया जाएगा, वे उसे ग्रहण कर देश तथा समाज को वैसा ही बनाएंगे।

विचार पर हावी मौकापरस्ती: कांग्रेस के विजय बहुगुणा को भाजपा में शामिल कराते अमित शाह

विचार मुक्ति के लिए मेहनत, मजदूरी, व्यापार-धंधा, रोजी-रोटी या तिजोरी की चिंता करने वालों को दोषी न माना जाए। अब तो हिमालय, गंगा-यमुना, गोदावरी के किनारे अथवा उपासना स्थलों पर पूजा-पाठ, मंत्र-तंत्र करने वाले भी 'विचार-ध्यान' से मुक्त हो योगी के रूप में ही सत्ता के सिंहासन पर पहुंचने के लिए दिन-रात परिश्रम करने लगे हैं। उन्हें अब भक्तों की अपेक्षा 'लॉबिस्ट', टी.वी.-रेडियो चैनेल की जरूरत हो गई है। इसे आप 'बुरा देखन' या 'अच्छा देखन' समझें तो मीडिया की अपनी बिरादरी के लिए एक बड़े वर्ग को 'विचार मुक्त' करने के लिए बड़े संपन्न मीडिया संस्थानों को श्रेय देना उचित होगा। ऐसे संस्थानों को बुद्धिजीवी संपादक-पत्रकार की अपेक्षा 'स्पेस'-(कृपया आकाश नहीं समझें) प्रकाशन या प्रसारण में मसालेदार उपयुक्त सामग्री भरने वाले एवं मार्केटिंग में चमत्कार करने वाले प्रबंधकों की आवश्यकता रहती है। मुर्डोक को भी मात करने वाले 'मीडिया मुगल' भारत में हो गए हैं। इसलिए अपने दिमाग पर किसी तरह का बोझ डाले बिना 'विचार मुक्त' समाज के आईने को देखते हुए हंसते-मुस्कराते रहिए।

www.outlookhindi.com